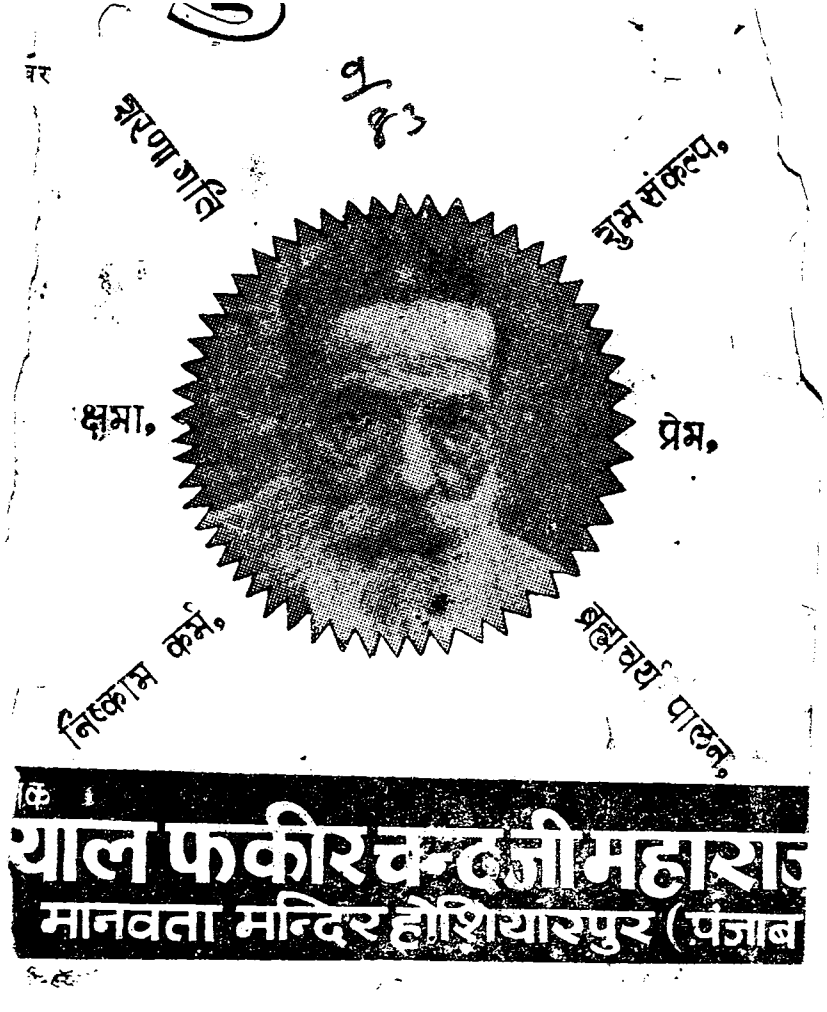
शरणागति
शुभ संकल्प,
क्षमा,
प्रेम,
निष्काम कर्म,
ब्रह्मचर्य पालन,
याल फकीर चन्दजी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब

## 'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जॉय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पीं० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य ८—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

प्रकाशक

R

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमि... पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ।।

# ❀ मनुष्य बनो ❀

सितम्बर १९८३ | वर्ष ३३ | भाद्रपद संवत २०४० वि० | अङ्क ११

## झण्डे का गीत

मानवता के झन्डे सदा लहर लहर लहराये
परम तत्व ने लिया अवतार मानुस बनो की उठाई आवाज
दुखियों के रखवारे तेरी,सदा जै जै कार
मानवता के — — — — —
बन के फकीर आ गये तुम मार्ग सत का दिखा गये
जो–२ आया तेरे दर पे कभी खाली ना जाये तो सदा लहराये
अलख अगम से उतरी धार बन गए आकर परम दयाल
जीवों के हो तुम प्रतीपाल, दुखियों के सहारे
तेरी सदा ही जै–२ कार

मानवता के झन्डे — –
शब्द नाम का जहाज बनाया सुरत शब्द का मेल सिखाया
सार तत्व का दे दिया सार तुम्हें सदा-२ नमस्कार
मानवता के—

दर तेरे पे खड़ादास- पूर्ण करना सब की आस
पूर्ण भक्त बन जायें तुम्हें सदा–२ नमस्कार सेवा करना सत्र
का काम मानव मन्दिर में दिया योग दान सब कामो में तू महान
परम दयाल के प्यारे मानता के झण्डे सदा ...२ लहराय

शेष पृष्ठ चार पर

संरक्षक दे...

सर का लाभ उठायें।

**प्रोग्राम-** १५ अक्तूबर १९८३ शनिवार प्रातः ९ से १२ तक
सायं ३ से ५ बजे तक १६ साय ,, ,, रविवार प्रातः ९ से १२ बजेतक
नोट—१- लंगर का प्रबन्ध पहले की तरह १५ अक्तूबर प्रात व सायं और १६ अक्तूबर केवल प्रातः के लिए यथा शक्ति सभा की ओर से होगा।

२. दिल्ली से बाहर के आने वाले प्रेमी भाई १४ अक्तूबर दोपहर के पश्चात किसी भी समय सलवान स्कूल में आकर ठहर सकते हैं, परन्तु अपने साथ बिस्तर अवश्य लाये।

निवेदक व दर्शनाभिलाषी
मोहनलाल नय्यर -सैक्रेटी , कृष्णलाल अग्रवाल -प्रधान
दलाल मानवता प्रचारक सभा (रजि०) दुकान न० १०६ के पीछे
शंकर रोड मार्किट , न्यू राजेन्द्रनगर , न्यू दिल्ली-६० फोन: ५८३२३०

मोदी नगर में सतसंग प्रोग्राम
परम संत आनन्द राव जी (आ० प्र०)

१८-१०-८३ ८ से १० बजे तक सुबह
५ से ७ बजे तक साँय
१९- १०- ८३ ८ से १० बजे तक सुबह

सतसंग स्थल:- मानवता मन्दिर, दयाल बिहार निकट
मोदी बाग, मोदी नगर

जीवन क्या है।
क्यों समय को खो रहा है। मेहरबाँ
मौत आयेगी मिटा देगी निशाँ ॥
संत की संगत में आना देरकर।
ले अमर पद मौत का मुँह फेर कर ॥

बहन रतन कान्ता, मोदी नगर

# पौहारी बाबा

## ( गाजीपुर के प्रसिद्ध साधू )

ले0 महर्षि शिवब्रत लाल वर्मन, एम0 ए0

संसार के उपकार के भाव से श्री बुध भगवान ने ऐसा उद्योग किया कि थोड़े ही काल में बड़ा परिबर्तन आ गया, उन्होंने सत्य के खोजने और फैलाने में क्या २ दुःख नहीं उठाया ? बाते बताना युक्ति का प्रकाश करना और बात है । किन्तु संसार में ऐसा प्रभाव उत्पन्न करना कि उस की लहर सबके हृदयों पर प्रचलित हो बड़ी विशेष बात है । इस में असाधारण बल की आवश्यकता होती है ।। सत्य की वेदी पर बलि हो जाना, अपस्वार्थ को त्याग देना सहज काम नहीं हैं । सत्य केवल ऐसे ही मनुष्यों को प्राप्त होता है और ऐसे ही महात्माओं का लोहा जगत को मानना पड़ता हैं ।।

हजार विरोधत की जाय परन्तु जहाँ धीरता और गम्भीरता वर्तमान वह बिना प्रभाव उत्पन्न किए न रहेगी ।

जो मनुष्य जितना नीच भाव धारी होगा उसमें उतनी ही अधिक भोग इच्छा प्रबल होगी । असली उन्नति यह है कि मनुष्य इन्द्रियों के दासत्व से ऊपर आवे, और आत्मिक दृश्यों को देखकर संसार असार के मोह को छोड़ दे

मनुष्य स्वभावतः यह समझता है कि संसार असार है । परन्तु उस पर प्रबल नहीं आता । तो भी वह खूब जानता है कि वह जीवन पवित्र है जो इन्द्रियों का दास नहीं होता । मनुष्य की उन्नति का अनुमान उस जल वायु से किया जाता है जिस में वह रहता है । और जहां इन्द्रियाँ नीचे दव जाती है । उच्च मनुष्य वह है जो ऊंचाई पर चढने के लिए अपने समय का विशेष भाग खर्च करता है ।।

जिस प्रकार अग्नि संसार में प्रगट हो कर सब जगह विराजमान है, उसी प्रकार मनुष्य में उस अनन्त ज्ञान का चमत्कार भी अपना प्रभाव दिखाए नहीं रहता । यदि मनुष्य चाहता है कि उससे लाभ उठावे तो वह उस ज्ञान को

यह ज्ञान ही है जो वैकुण्ठ का द्वार खोल देता है। ज्ञान ही से पशु मनुष्य बन जाते हैं। और ज्ञान ही से उस को समझ आती है। इस के जान लेने से फिर किसी के जानने की आवश्यकता नही रहती। ज्ञान का जीवन उच्च जीवन है। वह पृथ्वी धन्य है जहाँ ज्ञानी उत्पन्न होते हैं॥

# द्वितीय अध्याय।

पौहारी बाबा जिला बनारस के घोसी नामक ग्राम में उत्पन्न हुए थे। उन के माता पिता ब्राह्मण थे, जब समझ बूझ वाले हुए तो गाजीपुर में आकर अपने पित्ती ( चचा ) के साथरहने लगे। और वहाँ ही इनकी शिक्षा हुई॥

आज कल हिन्दू साधूओं के अनेक पन्थ हैं। इन में से विशेष २ सन्यासी, योगी, वैरागी, और पन्थाई कहलाते हैं। सन्यासी अद्वैतवादी होते हैं और श्री स्वामी शंकराचार्य जी को मानते हैं।योगी वह हैं जो विविध प्रकार के साधन करते हैं। वैरागी स्वामी रामानुज जी के मत वाले हैं। पन्थाई वेदान्त और योग के मानने वाले हैं। पौहारी बाबा का चचा रामानुज सम्प्रदाय का ब्रह्मचारी था। उसका विवाह नहीं हुआ था। गङ्गा के किनारे गाजीपुर से २ मील की दूरी पर उसे कुछ भूमिदी गई थी। और वह वहाँ ही रहा करता था। उसके और कई भतीजे थे परन्तु पौहारी बाबा को ही उस ने अपनी सम्पति का अधिकारी बनाया॥

पौहारी बाबा के बाल्य काल के स्वभाव को कोई नहीं जानता, केवल इतना ही जानते हैं कि वह न्याय शास्त्र और व्याकरण खूब जानते थे॥

बाल्य काल में उन के जीवन में ऐसी कोई विशेषता नहीं दिखाई दी जिस का आगामी जीवन में प्रकाश हुआ। उलटा हँसी खेल और मखौल के अधिक प्रेमी थे और इसलिए जब लोगों ने सुना कि पौहारी बाबा साधु हो गया है तो सब को बड़ा अचम्भा हुआ॥

संसार में बाज़े समय ऐसी घटनाऐं हो जाती हैं कि जो क्षणमात्र में

बाबा का चचा मर गया उन पर शोक का पहाड़ टूट पड़ा हँसी मखौल का स्वभाव जाता रहा ॥

इस देश में धार्मिक शिक्षा के लिये गुरु की आवश्यकता हुआ करती है। गुरु के बिना सत्य मार्ग मिलना कठिन होता है। पुस्तकों की सहायता से सत्य मार्ग का मिलना बड़ा कठिन है ॥

भारतवर्ष में आत्मिक पद के अभिलाषी एकान्त में रहकर धार्मिक तत्वों का अध्यन किया करते थे। और आज भी जङ्गल पहाड़ में कोई ऐसा स्थान न होगा जो किसी महात्मा के नाम से प्रसिद्ध न हो ॥

इसके अतिरिक्त यह भी लोगों को निश्चय हैं कि " साधु रमता और पानी बहता " अच्छा होता है। जो ब्रह्मचर्य व्रत धारण करते हैं वह अधिकतर तीर्थ यात्रा में रहते हैं। ताकि किसी स्थान या व्यक्ति में उनका मोह न हो जावे। और साथ ही साथ औरों को धर्म की शिक्षा भी देते रहें। चारो धाम का परिक्रमा करना उनके लिए आवश्यक है ॥

चारौ धाम यह हैं :-द्वारिका, सेतबन्द रामेश्वर, बद्रीनाथ, जगन्नाथ यह यह भारत की अन्तिम सीमाओं पर स्थापित हैं। सर्वसाधारण का मत है कि जब तक मनुष्य चारो धामों की परिक्रमा नहीं करता तब तक पूरा त्यागी नहीं होता ॥

अनुमान चाहता है कि नये ब्रह्मचारी पर इस बात का प्रभाव अवश्य पड़ा होगा। इसके अतिरिक्ति रामानुज संप्रदाय की उत्पत्ति द्रावड देश से है इसलिये भ्रमण इच्छा पैदा हुई होगी। उनकी प्रीति थी चिंत्य के बङ्गाली शिष्यों से भी थी कदाचित कुछ दिनों बङ्गाल में भी रहे होंगे ॥

उनके मित्रों ने गिरनार पर रहना अनुमान किया है ॥

गिरनार प्राचीन काल से पवित्र समझा जाता है। बौद्ध उसको मानते हैं और महाराजा अशोक ने स केवल वही अपना खम्भ स्थापित किया था; वरन् साधुओं के लिए मठ भी बनवा दिए थे। बौद्ध और जैनी इसको अपना तीर्थ स्थान समझते हैं ॥

# तृतीय अध्याय

हिन्दुओं में गिरनार के पवित्र समझे जाने का एक कारण और भी है कि यहाँ प्रसिद्ध ऋषि दत्तात्रेय जी रहते थे। और इस काल में भी कभी २ वहाँ अच्छे योगियों के दर्शन भी हो जाते हैं। गिरनार पर्बत पर चिरकाल तक रहने के पश्चात पौहारी जो बनारसचले आये। और गंङ्गा जीं के किनारे गुफा बनाकर रहने लगे क्यों कि उसमें योग समाधि में विघ्न नहीं पड़ता। इसके पश्चात वह फिर गाजीपुर में आये यदि उनका चचा जीवित होता तो भी कम पहचानता क्यों कि उनके मस्तक पर तपस्या का तेज चमक रहा था। परन्तु वह मर चुका था कुछ बाल्यकाल के सहपाठी मिले उन्होंने इनका आदरभाव किया परन्तु इनकी असली महिमा को जान न सके। क्योंकि वह सासारिकता में ग्रस्त थे उनकी बुद्धि पर परदा पड़ा हुआ था वह पौहारी बाबा से कुछ लाभ न उठा सके। पौहारी बाबा ने यहां भी एक गुफा बनवाई और उसमें बैठकर तप करने लगे। धर्म मत के इतने दृढ़ थे। कि एक छोटी से छोटी बात को भी उलघन नहीं करते थे। साधु सन्त जो कोई आ जाता सब के भोजन का प्रबन्ध करते। कुछ दिनों पश्चात गुफा पर बड़ी भीड़ होने लगी और जब उन्होंने देखा कि भगवत भजन में विघ्न पड़ता है तो गंङ्गा पार तैर कर चले जाते थे और वहां भगवत भजन करते थे॥

कुछ दिनों के पश्चात उन्होंने अपना आहार बदल दिया अन्न त्याग कर केवल निम्ब के पत्र ओर लाल मिर्च चबा लिया करते थे। रात के समय गंगा के दूसरे किनारे पर तप किया करते थे। इसके पश्चात अधिकतर गुफा में रहने लगे। यहाँ तक कि महीनों बीत जाते थे और वह बाहर नहीं निकलते थे पता नहीं उन दिनों वह क्या खाते थे। सर्व साधारण का मत है कि वह उन दिनों वायु खाकर रहते थे। इसलिये उनका नाम पवनाहारी बाबा पड़ गया था। उसी का अपभ्रश पौहारी बाबा है॥

एक बार वह इतने काल तक गुफा में रहे कि लोगों को भ्रम हुआ कि वह मर गए हैं, परन्तु कुछ दिनों के पीछे बाबा जी बाहिर निकल आए। और

साधुओं का भण्डारा किया, तब जाकर लोगों को धैर्य हुआ ॥

पौहारी बाबा जिस समय समाधि की दशा में नहीं हुआ करते, तो बहुत से मनुष्य उनके दर्शनार्थ आ जाया करते थे और बाबा जी भी कृपा करके गुफा के घर पर आकर बात चीत कर लेते थे ॥

राय गगन चन्द्र बहादुर अफसर अफीम विभाग गाजीपुर के द्वारा हम को भी उनके दर्शन करने का अवसर प्राप्त हुआ, एक बार स्वामी विवेकानन्द जी ने पूछ लिया कि आप गुफा से बाहर निकल कर जगत का उपकार क्यों नहीं करते । इस पर बाबा जी ने उत्तर दिया; —

एक बार कोई दुराचारी मनुष्य नाक काट कर छोड़ दिया गया, वह लज्जा के मारे बन में रहने लगा, और सब लोगों से दूर रहता था, उस की इस दशा को देखकर लोगों ने उसे सिंह जाना और हठ पूर्वक उसके पास जाने लगे । एक आदमी ने शिष्य होने की प्रार्थना की पहले तो उसने इन्कार किया परन्तु जब उस ने बहुत हठ किया तो कहा कल एक छुरा लेकर सवेरे आना उसने वैसा ही किया साधू इसको घने जङ्गल में ले गया, और छुरा से नाक काट कर कहा आज से तू चेला बन गया तू भी इसी प्रकार चेला बनाना परिणाम यह हुआ कि कुछ काल में बहुत से नक कटे मनुष्यों की मण्डली बन गई । क्या आप चाहते हैं कि मैं भी इसी प्रकार कोई सम्प्रदा चलाऊँ ।

इस पर विवेकानन्द जी ने फिर प्रश्न किया तो बाबा जी ने उत्तर दिया कि क्या मनष्य केवल जिन्हें से ही उपदेश देता सकता है अपनी हार्दिक शक्ति से कुछ नहीं कर सकता ।

स्वामी विवेकानन्द जी ने प्रश्न किया आप तो बड़े योगी हैं आप कर्म क्यों करते हैं ? बाबा जी ने उत्तर दिया कि कर्म अपने ही लाभ के लिए किया जाता है दूसरों के लिए नहीं किया जाता है ।

एक बार उनके आश्रम चोर मेंआया परन्तु उनके रुप को देखकर डर गया और सब कुछ छोड कर भागा, बाबा जी उसके पीछे दौड़े और उससे मिलकर कहा " भाई तुम अपना असबाब लेते जाओ यह मेरा नहीं तुम्हारा है "

जब चेत आया और लोगों ने पूछा कि क्या हाल है तो कहने लगे यह सर्प मेरे मित्र ही के यहां से तो आया था।

बाबा जी में अत्यन्त धीरता और गम्भीरता वर्तमान थी, वह सब बातों को ईश्वर की ओर से समझते थे। और कठिन से कठिन दुख की अवस्था में भी अपशब्द मुख से नहीं निकालते थे।

कुछ काल के पीछे वह फिर गूफा में रहने लगे, द्वार बन्द रखते थे, भीतर ही से उत्तर दिया करते थे। हवन सदैव करते थे। जब धुआं उठता था तो लोग समझ जाते थे कि बाबा जी पूजा कर रहे हैं।

बाबा जी पूजा पाठ की वस्तुओं को बहुत स्वच्छ रखते थे और अपने हाथ से साफ किया करते थे।

बाबा जी के स्वभाव में बड़ी दीनता थी एक बार कहने लगे " ईश्वर उन लोगों का है जिन के पास और कुछ नहीं है, जिन्होंने अपने जीव को भी उस पर निवछावर कर दिया है।

वह किसी को उपदेश नहीं देते थे। लेकिन जब बात चीत हो पड़ती तो फिर ज्ञान धारा बह चलती थी।

शरीर के लम्बे और मोटे ताजे थे देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि अभी थोड़ी आयु के हैं। शब्द सुरीला और मीठा था। दस वर्ष तक इक दम वह किसी से नहीं मिले। थोड़ा सा माखन और कुछ पक्के आलू उनकी गुफा के द्वार पर रख दिये जाते थे और रात्रि को जब वह कभी समाधि से उठते तो खा लिया करते थे। समाधि में उसकी भी आवश्यकता नहीं होती थी।

उनका जीवन असली योग और प्रेम का जीवन था। एक दिन गुफा से धुआं बहुत निकलने लगा, और माँस के जलने की गन्ध आने लगी और जब वह बहुत बढ गई तो लोगों ने विवश होकर गुफा का द्वार तोड़ डाला, भीतर जाकर देखा तो बाबा जी ने अपने आप को हवन कर दिया था, और राख के सिवाय वहाँ कुछ न था।

जब उन्होने देखा कि अब अन्तिम समय आ पहुंचा हैं तो उन्होने अपने

हुए प्राचीन आर्य्यों की तरह अपने शरीर व हृदय को हवन कर दिया।

# महाराजा जनक और उनका एक शिष्य

महाराजा जनक मिथला के राजर्षि कहलाते थे। उस समय के बड़े २ विद्वान उनके दरबार में आत्मिक तत्वों के जानने के लिये आया करते थे। बहुत से साधु ब्राह्मण उनके शिष्य थे। क्यों कि वह ब्रह्म विद्या के ज्ञाता थे।

एक दिन जब वह सिंहासन पर बैठे हुए दरबार कर रहे थे तो एक ब्रह्मचारी आकर कहने लगा, महाराज ! मैंने आपकी महानता की बड़ी प्रसन्सा सुनी हैं। आप वेदों के ज्ञाता हो, आप से बड़े २ ऋषि भी शिक्षा लाभ करते हैं। घर में रह कर आप गृहस्थी रहते हो, रण क्षेत्र में सिंह के समान गर्जते हो, और शत्रुओं के छक्के छूड़ा देते हो, धर्म्मावस्था में पूर्ण विरक्त होते हो। सब जगह आप अद्वितीय रहते हो। अनेक कार्य करते हुऐ भी आप को ब्रह्मनिष्ट कहा जाता है हर समय आप का ध्यान ब्रह्म में लगा रहता है, हे राजन यह बात मेंरी समझ में नहीं आती और मैं नहीं जानता कि कैसे सम्भव है कि राज कार्य और गृहस्थ धर्म पालन करते हुए आप एकाग्र वृत्ति हो सकते हैं।

जनक ने कहा हे ऋषि ! आप का बिचार सत्य है। संसारी और त्यागी मनुष्य का धर्म पृथक हैं। उनके जीवनों में आकाश पाताल का अन्तर है। परन्तु ऐसे भी यन्त्र हैं कि जिनके द्वारा दोनो धर्म सुगमता से पालन किए जा सके शब्दों के द्वारा इसका समझाना कठिन है यदि तुम मेरे कथानुसार कार्य करो तो मैं आप को समझा सकूंगा।

ब्रह्मचारी बोला मुझे आपका कथन स्वीकार है। तब राजा ने ब्रह्मचारी के हाथ में पारद का भरा हुआ कटोरा रख दिया और चार सिपाहियों को जो नंगी तलवारों के लिए हुए थे उसके साथ करके आज्ञा दी कि तुम इस साधु कोनगर के सब गली कूचे दिखा लाओ और नगर में सब जगह खेल तमाशे,

देखने से चित्त प्रसन्न होता है वह सब वर्तमान रहैं, किन्तु इस बात का ध्यान रक्खो कि यदि पारह का एक बूंद इसके कटोरे से गिर जाये तो इसका सिर खड़ग से उड़ा दो यह मेरी पक्की आज्ञा है ।

ब्रह्मचारी इस बात को सुनकर क्रोधित हुआ परन्तु उसने स्वयम राजा से प्रतिज्ञा की थी, इसलिए अब कुछ न बोल सका ।

प्रभात का समय था, साधूने भ्रमण करना आरम्भ किया, संध्या के समय वह सिपाहियों के साथ राजा के पास पहुँचा । राजा उस समय सध्योपासन कर रहा था जबउस से निवृत हुआ तो साधुकी ओर देखा' साधु अपने विचार में इतना डूबा हुआ था कि उसको राजा के पास आने तक की खबर नही हुई जनक ने मुस्करा कर उसको आज्ञा दी कि अब कटोरा रखदो और सुख पूर्वक बैठ जाव ''

जिस जगह उस समय जनक बैठा हुआ था वह स्थान बहुत सुन्दर और मनोहर था । जगह २ फुवारे छूट रहे थे । पुष्प खिल रहे थे, और मन आनन्दित हो जाता था ।

जब ब्रह्मचारी बैठ गया तो जनक ने मुस्करा कर पूछा ऋषि जी ! लोग कहते हैं मेरा नगर बहुत सुन्दर और बसा हुआ है , उसके देखने के लिए दूर २ के मनुष्य आया करते हैं । तुम उसे आज दिन भर देखते रहे हो, बताओ तुमने कैसा पाया ? साधु ने उत्तर दिया राजन ! मैंने कुछ भी नहीं देखा मेरा ध्यान पारद की ओर लगा रहा । जनक ने कहा सत्य है, देखो मैंने तुम्हारे सन्मानार्थ नगर को सजा रक्खा था, जगह २ पर शोभायवान दृश्य हो रहे थे, परन्तु तुम्हारा मन पारद की ओर था इसलिए तुमने कुछ नहीं देखा । ठीक इसी प्रकार है ब्रह्मचारी जी मेरा हाल है । मेरा हृदय भी पारद का कटोरा है, मैं हर समय परमात्मा का ध्यान रखता हूँ एक पल के लिए भी उससे अचेत नहीं होता । यह सब राज कार्य संसारिक बखेड़ मुझ को अपनी ओर आकृष्ट नही कर सकते । सारी बात धारणा की है । यदि मनुष्य में धारणा शक्ति नहीं है तो वह दास बना रहता है । पग २ पर उसे ठोकरे लगती रहती

ध्यान में एक पल के लिए अचेत न हों। और मैं स्वयम ऐसा ही करता हूँ। आशा है कि अब आप का सन्देह निवृत हो गया होगा।

ब्रह्मचारी ने राजा को नमस्कार किया और शान्ति ३ कहते हुए वन का मार्ग लिया। श्री कबीर साहिब जी कहते हैं:—

दोहा:— और सुरतीविसरी सकल; निश दिन रहूँ असंग।
आव जाब कासे कहूँ- मन राता गुरु संग ।।

# श्री शुकदेव जी और बिच्छू

एक दिन का वृतान्त है कि श्रीं शुकदेव जी नदी के तट पर बैठे हुए आचमन कर रहे थे, संयोग से एक पत्ते से चिपटा हुआ बिच्छु आ रहा था जो बहुत व्याकुल था शुकदेव जी ने दया भाव से भर कर उसे बाहर कर दिया, परन्तु बिच्छू ने उसी क्षण उनके हाथ में डङ्क मारा जिससे उनको कष्ट हुआ। थोडी देंर के पश्चात फिर वही विच्छू बहता हुआ दिखाई दिया, शुकदेव जी ने उसे फिरबाहरनिकाल दिया, उसने फिरउनके हाथ में डङ्क मारा इसप्रकार शुक देव जी ने उसे तीन बार पानी से बाहर किया और उसने तीन ही बार उनके डङ्क मारा। कुछ स्त्रियाँ यह दृश्य देख रहीं थी वह उनके पास आकर कहने लगी तुम कैसे मूर्ख हो जो इस दुखदाई जीव को बार २ पानी से निकाल कर दुख सहते हो? शुकदेवी ज ने उनको नमस्कार करके कहा देखिये ! मैं साधु हूँ मेरा धर्म यह है कि चाहै कोई हजारदुख पहुचाता रहे मैं उसके साथ प्रेम और प्रीति का बर्ताव करूं। मैं जानता हूं कि साधु का परोपकार धर्म है। जब वह अपना स्वभाव नहीं छोड़ता तो मैं अपना स्वभाव कैसे छोड़। इस संसार में नाना प्रकार के धर्म है जो जिस आश्रम में है उसे आश्रम का धर्म पालना चाहिये। माता तू मुझको उपदेश दे रही हैं मैं तेरा कृतज्ञ हूँ। मैं साधु होकर कैसे किसी दुखीयाजीव के काम न आऊं। साधु यदि संसारी मनुष्यों की बुराइयों को देख कर उनसे घृणा करने लगे तो वह फिर साधु कहां रहा। इस लिए यदि बिच्छू डङ्क मारता है तो मैं अपना प्रेम उसे देता हूं। यह साधु का धर्म है। सब अपने २ स्वभाव के अनुसार काम करते हैं, मैं भी अपने स्वभाव के अनुसार काम करता हूं। इसमें मूर्खता क्या है ? स्त्री शुकदेव जी का उत्तर सुन कर लज्जित हो गई और फिर अपने घर चली गई।

दोहा —सुख देवें दुख को हरें, दूर करें अपराध।

# मन को वश में करना

इस मन को वश में करना बहुत कठिन काम है। इतना साधन करने पर भी मन ऐसी जगह पर गिरा देता था कि मैं महसूस करता था कि मैंने गलती खाई। पहिले मैं अशान्त हो जाता था मगर अब नहीं होता क्यों कि अब मुझे ज्ञान हो गया, है अनुभव कर लिया है कि मैं मन नहीं हूं। मेरा कोई सम्बन्ध मन से नहीं है। मन कोई विचार उठाता है मगर यह ख्याल कि मैं मन नहीं हूं उस विचार को गिरा देता है। यदि अन्य महात्मा लोग अपनी रहनी का वर्णन करते तो जीवों के अनेक भ्रमण दूर हो जाते। कभी मन ने मुझे मार गिराया, कभी मैंने इसे मार गिराया। अब मन मुझे दुख नहीं देता। विचार उठता हैं मगर आकर्षण का कारण नहीं बनता। मैं बे परवाह हो जाता हूँ। जब तक एसी अवस्था तहीं आती तब तक मन पर काबू नहीं आता। बाहरी गुरू जैसा कि आप लोग समझते हो मदद नहीं कर सकता। वास्तव में वह गुरु या ज्ञान जो सत्संग में सीखा है सहायता करेगा।

इस मन के विषय पर कबीर साहब का एक और शब्द सुनो:—

काहू न मन बस कीना, जग में काहू न मन बस कीना ॥
श्रंगी ऋषि से बन में लूटे, विषै विकार न जाने।
पठई नारि भूप दशरथ ने, पकरि अयोध्या आने ॥१॥
सूखे पत्र पवन भषि रहते, पाराशर से ज्ञानी।
भरमे देख रुप बनिता को, काम कन्दला जानी ॥२॥
सोइ सुरपति जाको नारि सुचि सी. निस दिन ही सँग राखी।
गौतम के घर नारि अहिल्या। निगम कहत हैं साखी ॥३॥
पारवती सी पतिनी जाके, ताको मन क्यो डोले।
खलित भये छवि देख मोहिनी, हा हा करके बोले ॥४॥
एकै नाल कंवल सुत ब्रह्मा; जग उपराज कहावे।
कहैं कबीर इक मन जीते बिन; जिव आराम न पावे ॥५॥

योग साधन से इच्छा शक्ति ( Will Power ) प्रबल हो गई. खुशी

मिली मगर मन के प्रभाव से न बच सका। बचा उसी समय जब ज्ञान हो गया कि मैं मन नहीं हूं। इस ज्ञान के दाता आप लोग हैं। जो काम दाता मेरे साथ न कर सके वह आप लोगों के द्वारा पूरा हुआ क्योंकि मैं उनके सैन बैन या संकेत की बातों को समझ न सका। हाँ डंडे मार के समझा देते तो समझ जाता। मैंने इस कमी को महसूस किया। इसी कारण मैंने हर बात को स्पष्ट कर दिया। अब मेरे सतसंग को सुनने वाले दूसरों के बन्धन में नहीं आ सकते। वह दूसरे घर के नहीं रहते अर्थात कोई उन्हे आकर्षित नहीं कर सकता। कहा है:--

सतगुरु मारा खेंचकर, शब्द सुरंगी बान।
मेरा मारा जो जिये; फिर ना गहूं कमान॥

अब मैं फिर आपको मन के काबू करने पर बताता हूं कि आम लोगों को सुगम तरीका है सुमिरन और ध्यान।

सुमिरन— गुरु के बताये हुए नाम को बार बार याद करना और ध्यान का अभिप्राय है गुरु के रुप का ध्यान। आ, ई, पढ़ने वालों को सुमिरन से प्रारम्भ किया जाये। ध्यान करने से इच्छाशक्ति प्रबल हो जायेगी। फिर तुम मन को काबू कर सकते हो। हां, मेरा मन ध्यान से नहीं मरा। विचार उठते रहे। उस पर मुझे ज्ञान से काबू मिला।

जो लोग अधिक अशान्त होते है उनका मन निर्बल होता है। समझ जाता हूँ कि इसका ध्यान नहीं बंधा। ध्यान परिपक्व होने से चाहे अज्ञान दूर न हो मगर जीव अशान्त नहीं रह सकता। यह याद रखने को बात है कि यदि कोई व्यक्ति साधन भी करता है और विषय विकार में फंसा रहता है तो वह पागल हो जायेगा। इसलिये

**साधन अवस्था में शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य पालन करने की बडी आवश्यकता है। साथ ही भोजन और व्यवहार पर भी ध्यान देना जरूरी है।**

मुसलमान लोग जब ४० दिन तक रोजा रखते हैं तो गोश्त नहीं खाते और भी बहुत सी बातो से बचते है ।

मैं १२ साल बसरा बगदाद में रहा । वहा तप किया । वहाँ आन्नद मिला, खुशी मिली। शान्ति मिली । जब वहां से बदल कर सुनाम में आया दाता दयाल ने आज्ञा दी कि सन्तान पैदा करो । इससे मेरी शान्ति भंग हो गई । अशान्त रहने लगा । लाहौर के दो सत्संगी मेरे पास दाता दयाल के भेजे हुए आए । उन्होने कुछ पूछा । मैंने कहा कि मेरे पास कुछ नहीं । जाओ उन्हौने दातादयाल को लिखा कि फकीर चन्द ने ऐसा ऐसा कह दिया ।उन को उत्तर दिया गया कि जिनको फकीर से कुछ न नहीं मिला तो मेरे पास भी। कुछ नहीं । बे मेरे पास फिर आए । चिटठी पढ़कर बड़ी उथल पुथल हुई गुरुइज्म से घृणा हो गई । चूं कि मालिक को मानने बाला था, विश्वासी था कि दुनियां का कोई आधार होगा, मैंने अपने को उसके समर्पण कर दिया । उस समय मेरे अन्दर आप ही दीनता का भाव उत्पन्न हुआ । ए मालिक ! जो तुझे अच्छा लगे मेरा वह जीवन बनादे और मैं बेहोश हो गया । उस अवस्था मैं आवाज आई :---

जहां काम तहाँ नाम नहिं, जहां नाम नहिं काम ।
रवि रजनी दोऊ ना मिलें, एक ठौर एक याम ।।

आँख खुली और उनको कुछ कह सुन कर वापिस कर दिया । मेरे इस कहने का अभिप्राय यह हैं कि साधन अबस्था में शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य का पूरा ध्यान रखना चाहिये मगर इसका यह अर्थ नहीं कि तुम अपनी स्त्रियों को त्याग दो । अभ्यासियो को कहता हूँ कि अपनी स्त्री की इच्छानुसार चलो और स्त्रियां अपने पति की इच्छानुसार रहे । यदि स्त्री और पति एक विचार के नहीं तो घर नर्क हो जायेगा ।

में आपको वे बातें बता रहा हूं जो सतसंगों में नहीं कही जाती । मैं यह सब इस लिये कह रहा हूँ कि आप बात को समझ जाय । आपको शान्ति मिल जाय । यदि शान्ति चाहते हो तो गुरु मूर्ति का ध्यान करो । जिनका ध्यान नहीं बंधता वे आशा करते हैं कि मैं उनके अन्दर चला जाऊं, मगर

जो काम मैं नहीं कर सकता वह कैसे कहूं ।

मुझसे दातादयाल की मूर्ति अन्तर में नहीं बना करती थी । एक बार लाहौर में दर्शन करके लौटा । मूर्ति लोप हो गई । फिर गया । दर्शन करके लौटा । फिर वही दशा । इसी तरह सात बार गया । रोता था । तब दाता दयाल ने कहा — फकीर ! जब चुनमुन ( उनकी लड़की ) ससुराल जाती है वह इतना नहीं रोती । तब उन्होंने आज्ञा दी कि इसको ( मुझे ) रस्से से बाँधकर ले जाओ ।

कहने का अभिप्राय यह है कि मैं मन से इतना तंग रहा । यह मेरे जीवन के अनुभव हैं जो आपको कह रहा हूं ताकि तुम्हारी बैचेनी दूर हो जाय । यह गुरु मूर्ति मुझे उस समय बनी जब मैं बसरा चला गया । इस गुरु मूर्ति के प्रगट न होने के मुख्य कारण एक तो ब्रह्मचर्य की गिरावट और दूसरे अनेक आशाओं और वासनाओं का होना है । मगर यह न समझो कि चूंकि हम गिरे हुए हैं अथवा हमारा ब्रह्मचर्य गिर चुका है तो अब हमारा सहारा कुछ है ही नहीं । सुनो दातादयाल का एक शब्द है:—

मैं पतित ठहरा तभी, तू भी पतित पावन बना ।
डूबा भव सागर में मैं, तब तू तरन तारन बना ।।१।।
जो न होता जग मैं रावण, कैसे आते रामचन्द्र ।
कंस ने प्रगट किया, मथुरा में कृष्णानन्द कन्द ।।२।।
जो सुखी हैं उनको तेरे, नाम की चाहत नहीं ।
जो भले हैं उनको तेरे, काम को हाजत नहीं ।।३।।
पाप जब मैंने किया, तब तू हुआ परगट यहीं ।
मैं न करता पाप तुझको, जानता कोई नहीं ।।४।।
पापियों के तारने वाले, हमारा ध्यान कर ।
करते हैं सब हमसे घृणा, हमको पापी जानकर ।।५।।
अच्छे लोगों भागते हो, क्यों हमारे नाम से ।
कैसे कतरा कर चले हो, तुम हमारे काम से ।।६।।

ज्ञान का अज्ञानियों को ही, सदा अधिकार है।
पापियों ही के लिये जग, सन्त का अवतार है ॥७॥
सुख के सिर पत्थर पड़े, सुख ने भुलाया नाम को ।
दुख की बलिहारी है, दुख ही ने जपाया नाम को ॥८॥
मेरे दाता दीन और दुखियों की, तुझको लाज है ।
दीन बन्धो दीन हित, करना ही तेरा काज है ॥९॥
अपनी निन्दा क्या करे, निन्दा के हम कब पात्र हैं ।
सच्चे अधिकारी दया, जग के पापी मात्र हैं ॥१०॥
पाप ही दर्शन दिलाते हैं, तेरा संसार को ।
पाप करके यह सुझा, देते हैं भक्ति सार को।
द्वन्द में हमको फंसाया, और पापी कर दिया।
मन का बर्तन वासनाओं से, हमारा भर दिया ॥१२॥
सारे पापी तर गये, आज है अब बारी मेरी।
देखता हूं राह व्याकुलता, से आने की तेरी ॥१३॥
तर गये गणिका अजमिल, मुक्त शवरी भीलनी ।
तर गये सैना सदन तक, अरु सुपच चंडाल भी ॥१४॥
मेरी बारी पर बता अब, देर क्यों करने लगा।
इस अधम को तार दे, यह दुख से अब मरने लगा ॥१५॥
ऐ पतित पावन पतित, की ओर दृष्टि हो तेरी।
ए तरन तारन नहीं, होती है क्यों चिन्ता मेरी ॥१६॥
राधास्वामी अब दया से, मेरा बेड़ा पार कर।
दुख सहा करता हूँ निश दिन, आके तू उद्धार कर ॥१७॥

पतित कौन है ? पतित वह है जिसकी तवज्जह (सुरत) इन्द्रियों के स्थान पर फिरती या आसक्त रहती है। मन का इन्द्रियों में फंस जाना ही पतितपना है। तुम लोग जो बात कहता हूं उस पर तो जमते नहीं, वैसे कहते हो मूर्ति नही बनती। अज्ञानी मां बाप सन्तान को पागल बना देते है। धन्य है

नहीं बना। मैं दुनियाँ को भक्त, योगी बनाने नहीं आया हूं। मैं इन्सान बनाने आया हूं। मेरे मिशन में और दूसरों के मिशन में अन्तर है। जिस लड़के का आचरण ठीक है वह क्यों पचड़े में पड़ेगा। मगर जो इस मार्ग में आ गये हैं अथवा जो अशान्त हैं, निबल अबल हैं उनका इलाज सन्त मत है। प्रेम करो। मेरे जैसे की कमी पूरी हो गई तो तुम्हारी कमी भी पूरी हो जायेगी।

अज्ञानी मां बाप कैसे सन्तान को पागल बना देते हैं इस पर मुझे एक घटना याद आती है। एक बार एक फौजी अफसर फीरोजपुर में अपने लड़के को लाया। मैंने उसे देखा। उसका ब्रह्मचर्य नहीं गिरा था। स्वस्थ था। पूछा क्या बात है। कहा कृष्ण राधा दिखाई देते हैं। पत्ते पत्ते में स्त्री पुरुष दिखाई देते हैं। इसकी वजह से पागल हो गया। सोचा कारण क्या है। पूछने पर ज्ञात हुआ कि इसकी मां कृष्णभक्त है। यह मां से प्रेम करता था। समझा कि मां के संस्कार से यह दशा है। पागलों का इलाज शान्ति से होता है। मैंने समझाया। उसकी माँ को हिदायत की। वह न इसको अपना बनाया खाना खिलाये और न अपने पास रक्खे। नहीं तो यह फिर पागल हो जायेगा। इसमें रेडियेशन का नियम काम करता है इसलिये भक्ति भयूर्ण की न कीं जाय। सन्तमत में पूर्ण पुरुष की भक्ति का वर्णन है। वह भक्ति क्या है :—

दर्शन करे वचन पुनि सुने।
सुन सुन कर निज मन में गुने॥
गुय गुन छाँट लेय उन सारा।
सार धार तिस करे अहारा॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई।
जग भौ भव लाज अब गई नसाई॥

यह पूर्ण पुरुष का काम है कि शिष्य की प्रकृति और परिस्थितयों को देख कर उसे उपदेश दे ताकि उसका जीवन सुख शान्ति से व्यतीत हो जाय।

शब्द का अभ्यास सब के लिये नहीं है। कोई बन्दिश नहीं कि अभ्यास किया जाये। जीवन का ध्येय अभ्यास नहीं है। ध्येय है अडोल, अचिन्त

निर्वैर और निर्भय रहना। किसी के लिये योग साधन है किसी को और कुछ हर एक की लाइन अलग अलग है।

मैं राधा स्वामी मत की शिक्षा के अनुसार कह रहा हूं। वहाँ कहा है कि पूर्ण और जिंदा गुरु को ढूंढो। तुनने गुरु उसको मान लिया जिसके पीछे दस पांच हजार शिष्य फिरते हैं। मैं उनका आदर करता हूँ। तुम भी उनका आदर मान करो मगर उनसे जीवों का उद्धार नहीं होता। सन्त जमात लेकर काम नहीं करते। कहा है:—

शेरों के लहड़े नहीं, हंसों की नहिं पाँत।
लालों की बोरी नही, सन्तों की न जमात॥

इसलिये मैंने न कोई जमात बनाई और न बनाना चहाता हू। मेरा काम या मेरी शिक्षा दूसरों से भिन्न है। मैं केबल जगत कल्याण के लिये आया हूँ और उसी दृष्टि से दाता के हुक्म का पालन करता हूँ।

प्राणिमात्र को शान्ति !

## शब्द की व्यख्या — गुरु महिमा

आपने यह शब्द सुना। यह कबीर साहब का शब्द है। इसमें गुरु की महिमा गाई यई है। दुनियाँ गलत तरीके से गुरु मत में शामिल हुई है। मैं ने गुरु मत धारण किया। मुझे जो कुछ मिला वह कहता रहता हूं। वही कबीर साहब कहते हैं।

बलिहारी जाऊं मैं सतगुरु के, मेरा दरश करत भ्रम भागा।

यह है गुरु की महिमा जो इस कड़ी में कही गई हैं। इससे अधिक जो महत्व देते हैं वह गलत कहते हैं। यह मैं क्यों कह रहा हू। उसका कारण है। कारण यह है कि जो लोग मेरा ध्यान करते हैं वे कहते हैं कि मैं उनके अन्दर में प्रगट करता हूं, उनको उपदेश देता हूं, उनकी सुरत चढ़ाता हूँ दवा बताता हूँ, मरते समय उनको षालकी में ले जाता हूँ आदि। चूँकि मैं कही नहीं जाता और न उनका काम करता हूँ अतः यह उनका अपना ही विश्वास या ख्याल है। जिनके अन्दर कोई गुरु, देबता, राम, कृष्ण या फकीर बोलता है वह कोई बाहर से नहीं आता। सँसार में प्रत्येक व्यक्ति चाहे किसी भी

धर्म या सम्प्रदाय का हो अपने विस्वाश से अपनी मनोकामना किसी देवी देवता, राम या कृष्ण का सहारा लेकर पूर्ण कर सकता है। जैन महावीर या तीर्थ करकी उपासना से, बौद्ध बुद्ध को उपासना से अपना मनोरथ सिद्ध कर सकता है।

अनुभव ने सिद्ध किया है कि जो मिलता है वह दृढ़ या प्रबल इच्छा ( Strong will ) से मिलता है मगर भ्रम न राम कृष्ण या देवता दूर कर सकते हैं न मृतक गुरू। भ्रमों को जो निवारश करेगा वह जिन्दा पुर्ण गुरु ही करेगा।

## इसी लिए गुरु की महिमा गाई गई है ॥

यहाँ यह शंकाहो सकती है या सवाल किया जा सकता है कि देवता या राम या मृतक गुरु भ्रमों को दूर क्यों नहीं कर सकते। इसक उत्तर स्पष्ट है कि मनो कामना की पूर्ति तो दृढ़ इच्छा से हो सकती है मगर भ्रम बिना किसी जीवित पूर्ण पुरुष के नहीं मिट सकते। पूर्ण पुरुष क्या करेगा ? वह दूसरे व्यक्ति के भाव और विचारों को देखकर सतसंग द्वारा, सँकेत से अनुभव कराके' तजुर्बा कराके, अनुमान से, प्रमाण से, दूसरों के उदाहरण से जैसा वह उचित समझे उसके भ्रमों को दूर कर सकता है क्यों कि भ्रम अनेक प्रकार के होते हैं। उसकी स्थिति के अनुसार जैसी आवश्यकता हो वह असलियत को समझा देगा। पुस्तकें मृतक हैं। उनके रचने वाले आज नहीं हैं। पुस्तकों से रोग नहीं जा सकते। रोग तो तब जायेगा जब कोई डाक्टर रोगी की हर तरह परीक्षा कर लेगा, रोग का निदान कर लेगा और उचित औषधि देगा। इसलिये मैंने यह कहा है कि कोई मृतक गुरु भ्रम निवारण नहीं कर सकता। जीवित पूर्ण गुरु ही भ्रमों को निवारण कर सकता है।

कई लोग कहते हैं कि दयाल फकीर मरते समय अमुक स्त्री या पुरुष को पालकी में लेने आया मगर इन घटनाओं की न तो मुझे जानकारी है और न किसी को मरते समय लेने गया।

यह एक गूढ़ रहस्य है, राज है या भेद है जो आज तक किसी ने स्पष्ट रुप से नहीं खोला। कबीर साहब ने धर्मदास को कहा था—

धर्मदास तोहि लाख दुहाई ।
सार भेद बाहर नहिं जाई ॥

राधा स्वामी दयाल की बाणी में आता हैं—

सन्त बिना कोई भेद न जाने
( परन्तु )
वे तोहि कहें अलग में ।

मैं सचाई पसन्द मनुष्य हूँ । मैं कोई बात छिपाना नहीं चाहता । के संसार के भ्रम दूर करना चाहता हूं ।

ऐ हिन्दुओ ! तुम्हारा राम; तुम्हारा कृष्ण तुम्हारा अपना ही मन है । ऐ पंथाइयो ! तुम्हारा गुरु तुम्हारा मन है । ऐ ईसाईयो ! तुम्हारा ईसा तुम्हारा मन हैं ।

जो लोग राम, कृष्ण, देवता, खुदा, ईश्वर, ईसा या गुरु को अलग समझते हैं यह उनका भ्रम है । मुझे भी यह भ्रम था मगर मेरा भ्रम दूर हो गया ।

ऐ धार्मिक जगत के अनुयाइयों ! तुमने भ्रम में आकर मानव जाति को धर्म और सम्प्रदायों में बाँट दिया है । मैं काम करता हूं । क्यो ? क्योंकि गुरु आज्ञा है—

जग कल्याण जगत में आया; परमदयाल सनेही [redacted]

जग कल्याण के लिये काम करता हूँ नकि राजनैतिक ( Political ) ख्याल से या इन ख्याल से कि मैं अपना अलग पंथ सम्प्रदाय या मिशन बनाना चाहता हूँ ।

दूसरी कड़ी--

धर्मराय से तिनका तोड़ा, जम दुश्मन से दूर किया ।

हिन्दुओं में कहा जाता है कि मरते समय यम आते है । धर्मराज के सम्मुख हिसाब होता है । यह ठीक है या गलत मैं नही कह सकता है । जो मैंने समझा है वह कहता हूं । धर्मराज क्या है ? धर्मराज मनुष्य का मन है । यम क्या है ? यम कहते हैं खारिज करने या निकालने को । जो विचार, भाव

मनुष्य के जीवन में रहे हैं वही मरते समय सामने आते हैं। यदि कर्म नीच, गन्दे या बुरे रहे हैं तो वह विचार वह शक्ल बनायेगे जो भयावनी हैं। यदि शुद्ध, पवित्र, हितकानी या शुभ भाव, विचार रहे हैं तो वैसा रूप बनायेंगे। स्वपन में कइयों को साँप, बिच्छू, शेर आदि दिखाई देते हैं जो भय दिखाने वाले हैं तो समझ लो कि उनके मन में गन्दगी है। जिनको स्वप्न में देवता, पीर, पैगम्बर, गुरु आदि दिखाई देते है या शुभ विचार आते हैं तो उनके मन में शुद्ध पवित्र भाव और विचार है।

जब शरीर छूट जाता है तो जीव कहां जाता है? जैसे मन के विचार होते हैं उसे उसी के अनुसार दूसरा जीवन मिलता है। जिसने रहस्य को समझ लिया अथवा असलियत को जान लिया वह वहाँ जायेगा जहाँ से मन बनता है। मन के बनाने वाला प्रकाश ( Light ) है। जब प्रकाश भोतिक पदार्थ से मिलता है तब मन बनता है। यह प्रकाश ही ब्रह्म है। कहा है----

अव्वल अल्लाह नूर पाया कुदरत के सब बन्दे।

अब यह ज्ञान हो गया कि मरने के समय वहाँ जायेंगे जहां से मन निकलता है। इसीलिये हिन्दुओं में गायत्री मन्त्र है। इसी दृष्टि से यहा प्रथा हिन्दुओं में है कि मरते समय मरने वाले के हाथ में दीया रखते हैं और दस दिन तक यही नियम काम करता है।

मुझे गुरु दया से क्या मिला? मुझे धर्मराज और यम का ख्याल या भय जाता रहा। गुरु नें ज्ञान प्रदान कर दिया। फिर मेरा इष्ट कौन हुआ? शब्द और प्रकाश। शब्द ही गुरु है।

शब्द गुरू को कीजिये, बहुतक गुरु लबार।
अपने अपने स्वाद को, ठौर ठौर बटमार॥

जो मेंने अपना अनुभव कहा, वह गुरु की दया से प्राप्त हुआ। मैं अब गुरु की बलिहारी जाता हूँ। गुरु का अहसान मानता हूँ!

कामी तरे क्रोधी तरे, पापी तरे अनन्त।

क्या है ? गुरु ने धर्मराज रुपी मन के रूप को समझा कर इस मन को काबू में रखने का, जीवन व्ययीत करने का और निवृत्ति मार्ग का भेद दे दिया। वही भेद में तुमको देना चाहता हूँ। तुमकोभ्रमजाल, भव जाल से निकालना चाहता हूं मगर तुम निकलना नहीं चाहते।

तीसरी कड़ी--

सबद पात परवाना दिया; काग करम तज हंस किया।

दाता दयाल ( महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज )ने वचन कहे। अपने वचनों से या शब्दों से सुझे समझाया। यहै शब्द पान परवाना है, काग से हंस किया। काग और हंस में क्या अन्तर है ? काग गंदे पदार्थो पर दृष्टि डालता है। उन पर बैठता है, चौकन्ना होता है; छोटे छोटे बच्चो के रोटी छीन ले जाता है। जो सन्त या साधु असलियत को त्याग कर गरीब भोले भाले चेलों को लूटने को अपने पीछे लगाते हैं वह कौवे हैं। एसे ही मरे जैसा महात्मायह कहकर कि हैं तुम्हारे अन्तर में प्रगट होता हू और तुम्हारी सहायता करता हूं और इस अज्ञान में फंसकर जीवों को लूटता हं तो वह कौआ हुआ।

अब गुरु वया से क्या हुआ ? वह जो मलिनता थी, वह मिट गई। रहस्य को नहीं समझा था वह समझ गला और हंस हो गया। हंस क्या करता है ? वह दूध और पानी को छांट देता है, असलियत रुपी दूध पी लेता है और निःसार रूपी जल को छोड़ देता है। चूंकि रहस्य मेरी समझ में आ गया है अतः में हंस हू। इसलिये गुरु की मन्दना है।

गुरु की महर अगम निगम लखि, बिन गुरु कोई न मुक्त भया ॥

अगम क्या है ? निगम वया है ? अगम कहते हैं ज्ञान को अनुभव द्वारा सतपद का ज्ञान निगम कहते है अज्ञान को अर्थात जह तक अनुभव द्वारा ज्ञात न हो तब तक सच्चा ज्ञान नही हो सकता। बुद्धि द्वारा प्राप्त ज्ञान सीमित ज्ञान है। वह सतपद या निज स्वरूप का ज्ञान नहीं कहा जा सकता यह ज्ञान अज्ञान की व्यख्या है। जब ज्ञान हो गया तो मुक्ति हो गई।

## बन्धन और मुक्ति

मरने पर जो मुक्ति मिलती है उसका मुझे पता नहीं । मैं इस जीवन में मुक्त हू । एक मुक्ति है दूसरा बन्धन । किसी वस्तु से बधँना , आसक्त होना वन्धन है । किसी वस्तु से अलग होना, अनासक्त होना; बंधन रहित होना मुक्ति है । उसके रूप को समझना है । सन्तान का बन्धन, धन सम्पति का बन्धन, मत मतान्तरों का बन्धन, आदि आदि । इस दुनिया को समझना इसमें न फंसना ही मोक्ष है । गुरु की अपार दया है कि मैं अब बन्धनों से रहित हूँ, सुखी हूं ।

यह ज्ञान विना गुरु के प्राप्त नहीं होता और न मुक्ति प्राप्त हो सकती है । इसीलिए गुरु की महिमा है ।

## आवागमन

कहै कबीर सुनो भाई साधो, आवागमन से रखि लिया ।

आवागमन क्या है ? आना और जाना । कहाँ से आना और कहाँ को जाना ? यह आना जाना वैसे तो नित्य का मकाम है मगर धार्मिक दृष्टि से बारम्बार जन्म लेने और मरने को आवागमन कहा गया है । इसका सम्बन्ध शरीर और मन से है । जैसा मैंने पहले कहा है कि जब मन से आसक्ति जाती रही' बन्धन नहीं रहा; दुनिया का रूप समझ लिया गया और अनुभव द्वारा ज्ञान हो गया फिर आना जाना कैसा !

लोग कहते हैं कि ८४ लक्ष योनियां हैं । होंगी । चूं कि मैं ८४ लक्ष गिन नहीं सकता अतः मैं कह नहीं सकता कि ८४ लक्ष योनियां हैं या नहीं । मैं नहीं कहता कि नहीं हैं । यह कहता हूँ कि ८४ लक्ष्य हैं या यों कहो कि ८४ प्रकार के बोध ( Feelings ) है । कभी कोई बोध (भान) कभी कोई । मनुष्य इनमें फिरता रहता है । इनको सच्चा समझ कर दुखी सुखी होता रहता है । बात मेरी समझ में आ गई कि तू शब्द स्वरूप है बल्कि उससे भी परे । तू तो खेल खेलने आया है । इस ज्ञान के हो जाने से अब मुझे कोई

आवागमन नहीं है। यह नहीं कि मुझे ८४ लक्ष्य आने नहीं। वह किसी न किसी रूप में आते हैं मगर वह मेरे बन्धन का कारण नहीं है। कल्पना (Theory) से बुद्धि मानती है कि ८४ लक्ष योनियां हों। समुद्र में अनेक प्रकार के जीव, वायु में कितने ही कीड़े, जल में, अग्नि में, पक्षियों आदि में कितने ही प्रकार की योनियां हैं। शास्त्रकारों ने जो 84 लाख योनियां वर्णन की हैं वह हिसाब लगाकर लिखी होंगी। वह हिसाब मुझे नहीं आता। मैं वह नहीं कहता जिसका मैंने अनुभव नहीं किया है।

क्या यह सच है कि हमारा जीवन इस तरह बनता आया है जैसी कि डारविन की थ्योरी (कल्पना) है कि पहले मनुष्य बन्दर था और बनते बनते मनुष्य बन गया। मैं नहीं कह सकता कि यह गलत हैं। हर एक की अपनी अपनी राय देने का अधिकार है। मेरे अपने विचार में यह आया है कि हमारा शारीरिक जीवन है, मानसिक जीवन है, प्रकाश और शब्द का जीवन है और इससे परे का जीवन और है। जितने भी जीव पैदा होते हैं इनका कर्ता प्रकाश है। यही ब्रह्म है। यही खुदा है।

जब तक अनुभव नहीं होता या ज्ञान नहीं होता, बात समझ में नहीं आती। जो वस्तु शब्द और प्रकाश में रहती है, उसे देखती और सुनती है वह आधार है। जब वह नीचे जीवन में आता है इसे महसूस करता है। उसका यह ख्याल कि असलियत क्या है, बराबर उधेड बुन में रहता है। जब तक ज्ञान नहीं होता सुरत (तवज्जह) असली आधार को भूली हुई रहती है और मन और देह से सम्बन्ध रखती है और उसका आवागमन समाप्त नहीं होता। यह गुरु ज्ञान से जाता है।

इसकी समझ या इसका ज्ञान गुरु से, उसके बचनों से, सत्संग से और उसकी कृपा से होता है और तब आवागमन समाप्त होता है। अहम ब्रह्म कहना ज्ञान नहीं है। अपने को प्रकाश और शब्द रूप बनाओ तब आवागमन से बच सकोगे। अहम ब्रह्म कहने से नहीं बच सकते क्यों कि कहने मात्र से

नहीं बनती। सन्त मत यह नहीं कहता कि ब्रह्म कहो किन्तु यह कहता है कि ब्रह्म बनो अर्थात शब्द और प्रकाश मय बनो। यह अवस्था तुम कब प्राप्त कर सकोगे ? जबतुम दसवें द्वार से आगे पहुचोगे। यह दसवां द्वार सन्त मार्ग का साधन का मार्ग है न कि बाचक ज्ञान। सब लोग इस साधन को नहीं कर सकते।

## आवागमन से बचने का सुगम मार्ग

फिर आवागमन से बचने का सुगम मार्ग क्या है ? यह कि अपना इष्ट या आइडियल जो सबसे ऊँचा है उसे मानो। गुरु उसका रूप है। यदि वह गुरु पूर्ण नहीं है अर्थात उस पद का वासी नहीं है परन्तु तुमने उसे ऐसा माना हुआ है तो भी फल मिलेगा। जैसा माना है वैसा फल होगा। उदाहरण के रूप में यों समझ लो। एक स्त्री बड़ी सुन्दर हैं। उसका पति जब उसे प्रेम भाव से देखता है उसके भाव दूसरे होते है मगर जब पुत्र उसी स्त्री को देखता है तो उसमें मातृ भाव ही पैदा होगा। आज दिन तक पुत्र के विचार में यह कभी नहीं आया कि उसकी माता के साथ पिता के क्या संबंध है। ऐसा मामने से उसके कर्म की ओर दृष्टि नही जाती। मेरी सफलता का रहस्य यह है कि मेंने दातादयाल (महिष शिव) को परम तत्व या आधार माना। मैंने उनको पत्र में कभी महर्षि नही लिखा। मेरे विचार में भी कभी नही आया कि उनकी जाति क्या है अथवा उनका पिता कौन है इष्ट का कोई बाप नहीं होता। मैं तो इष्ट को पूर्ण मानता था।

एक बार राधास्वामी धाम के लिये चन्दे की अपील प्रकाशित हुई। मैं चूंकि उन्हें मालिक मानता था मैंने उनसे प्रार्थना की कि आप ऐसा न किया करें। लोग कहेंगे कि फकीर का मालिक अब माँगने पर आया है। मेरे ऐसे भाव थे और ऐसी दृढ़ भावना थी।

जिसका इष्ट पक्का नहीं वह उस पद को प्राप्त नही कर सकता। मेरे पास फरीदकोट में दो सतसंगी सतसंग के लिए आए। मेंने उनसे कहा कि अभी १५ मिनट तक चुप बैठ जाओ मगर कौन चुप बैठे। वे पूछने लगे— लड़के कितने हैं ? आपको वेतन क्या मिलता है ? आदि आदि। मैंने अली

मुहम्मद गाड़ी वाले को बुलाया और कहा कि इन्हें बार कर दो। वह डाकू हैं। कहने लगे डाकू कैसे ? इसलिए कि तुम घर की जाँच पड़ताल करते हो। तुम्हारा ध्येय सत्संग प्राप्त करने का नहीं। तुम अधिकारी नही हों। कहने का अभिप्राय यह है कि जब कोई व्यक्ति किसी के पास सत्संग कोजाय और भाव हों उसके दुनियांदारी के तो उसको सत्संग से क्या लाभ होगा।

एक बार दातादयाल ( महर्षि शिव ) सुनाम में पधारे। दिसम्बर का महीना था। सर्दी कड़ाके की थी। उन्होने सत्संग का समय रक्खा प्रातः ५ बजे से ७ बजे तक।

मैं स्टेशन से भागा जाता और समय पर पहुँचता। कुल बीस पच्चीस आदमी उस समय आ पाते थे। ५ बजे के बाद दरवाजा बन्द कर दिया जाता था कि कोई आने न पाये। एक सज्जन लखपति थे। वह ५ बजकर १० मिनट पर आये। कहा दरवाजा बन्द रक्खो। वह धनी पुरुष थे; ईश्वर से बड़ा धन है। जो ईश्वर नहीं करता वह रूपया करता है। लोगों के बहुत कहने पर उनके लिए दरवाजा खोला गया।

दातादयाल ने कहा कि मोतीराम (उनका नाम था) जो समय का पाबन्द नहीं उसको कुछ नहीं मिलता। आप भी अपने समय की कदर करो। यह भेद है, राज है। यही नियम सांसारिक कामों को है, यही परमार्थ के लिए है। परमार्थ की दृष्टि से यह चोला अपने घर जाने को मिला है। यह भी अपराध है कि परमार्थ की ओर ध्यान न दिया जाए। संस्कारों के अनुसार रुपया कमाने तथा सन्तान पैदा करने का एक ही समय होता है।

गुरु क्या करता है ? वह जीवन को आवागमन से मुक्त कर देता है। मुक्ति क्या हैं ? बेगमी' बेफिक्री, अडोलपना, निर्भयता !

मुझे बचपन से ईश्वर परमेश्वर की प्राप्ति की धुन थी। गुरु कृपा से मुझे छुटकारा मिल गया। दूनियाँ के सुख दुख नहीं व्यापते। इसलिए मैं दातादयाल (महर्षि शिव) का कृतज्ञ हूँ और उनके मिशन का मशालची ]torch bearer] हूँ।

जो इन बातों पर विचार करेगा तो उसका पहिला जन्म समाप्त हो

सकता है । राधास्वामी दयाल की वाणी है–

एक जन्म गुरु भक्ति कर, जनम दूसरे नाम ।
जनम तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निज धाम ।।

जीवन के कुछ भाग में सतसंग करो ताकि समझ आ जाए । काम करने का तरीका [Line of action] मिल जाए । जब सतसंग से समझ मिल गई और काम करने का ढँग ज्ञात हो गया तो उसके अनुसार रहने का सतत प्रयत्न ही नाम का जपना है । उससे खुशी और सुख शान्ति मिलने लगेगी । इसके पश्चात मुक्ति पद प्राप्त हो जाएगा । मुक्ति पद ही निज धाम है जो इसी जन्म में प्राप्त किया जा सकता है ।

जो मैं बता रहा हूं इसी पर लोग यदि दृढ हो जांय और अमल करने लगे तो फिर साधन की आवश्यकता नहीं मगर बाप की कमाई जब मुफ्त मिल जाती है तों कोई कदर नहीं करता । परिश्रम की कमाई की कदर की जाती है । इस पर मुझे एक उदाहरण याद आ गया । एक व्यक्ति अपनी ससुराल गया । उसके पास जूते अपनी कमाई के थे और एक रेशमी रूमाल बाप की कमाई का था । जब ससुराल में गया तो जूतों पर धूल जम गई थी । वह उस रेशमी रूमाल से साफ करने लगा । कहने का भाव यह है कि जिसको मुफ्त में वस्तु मिल जाती है तो वह कदर नहीं करता ।

मैं समझता हूँ कि इस रहस्य को खोलने में मैंने गलती की है लोग मेरे वचनों की कदर नहीं करते । सम्भव है इसी ख्याल से सन्तों ने इस रहस्य को गुप्त रक्खा हो । मैंने क्यों खोला यह मेरे बस की बात नहीं । विवश हूँ

मैं इन बातों को देश के आचार्यों, नेताओं और शासनधिकारियों तक पहुंचाना चाहता हूं । देखने में आ रहा है कि विभिन्न धर्मावलम्बियों को एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास किया जा रहा है और उसके लिए विभिन्न उपाय किए जा रहे हैं मगर चूँकि एकता न हो सकने का भी मूल कारण है उसकी ओर ध्यान नहीं है इसलिए सारे प्रत्यन निष्फल सिद्ध हो रहे हैं । यह मैं क्यों कह रहा हूं ? इसलिए कि एक समय था कि सन् १९२१ ई० में जो कान्फ्रेंस हुई उसमें हिन्दू मुसलमानों ने एक प्याले में पानी पीया था और

एक समय था १९४७ का जब एक ने दूसरे के सिर काटे। मैंने मुसलमानों से या और किसी जाति से घृणा प्रगट नहीं की किन्तु मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि मेरा अनुभव यह कह रहा है कि जब तक सच्चाई, यथार्थ शिक्षा या सन्त मत की शिक्षा का प्रचार संसार में न किया जायेगा इन ऊपरी प्रयत्नों से सफलता न मिलेगी। शासनाधिकारी उस शिक्षा को जो सन्तो ने वर्णन की है उसे समझे और उस पर चलें। सब कहते हैं कि धार्मिक पक्ष-पात दूर हो जाए। लोकसभा का एक सदस्य हिन्दू है। वह मन्दिर में पूजा करता है और हिन्दूपने से बंधा हुआ है। एक मुसलमान सदस्य मस्जिद में नमाज पढ़ता है। वह इस्लाम धर्म से बंधा है। एक सिक्ख सदस्य गुरुद्वारे में जाता है वह सिक्खमत से बंधा हुआ है। ये जब आन्तरिक रूप से मन्दिर, मस्जिद और गुरुद्वारों से बंधे हैं, वह लाख कहैं कि हम सब एक हैं, गलत है। वह निरपेक्ष नही हो सकते। वह तो पक्षपात और बन्धन से बंधे हैं। सन्त वह नहीं है जो माला फेरने वाले हैं। सन्त वह हैं जिनका सर्वत्र सम भाव हैं, सबको सामान देखते हैं।

मैं यह बातें अहंकार से नहीं कहता। मैं मानस शास्त्र (Psychology) और आत्म-विद्या का डाक्टर हूँ। दर्द-दिल से आवाज छोड़े जा रहा हूँ। मेरा अनुभव कह रहा है कि मानवता (मजहबे इन्सानियत) शासन में आयेगी। जब ऐसा होगा तब दुनियाँ में गुरुमत आयेगा।

गुरुमत क्या है ? कबीर साहब, नानक साहब और राधा स्वामी दयाल की शिक्षा। जब तक यह संसार में नहीं फैलती, मनुष्य जाति का कल्याण नहीं होगा।

जो लोग राधा स्वामी पंथ को एक अलग सम्प्रदाय समझते हैं वे राधा स्वामी के अर्थ नहीं समझते। स्वामी जी का कथन है:-

राधा आदि सुरत का नाम।
स्वामी आदि शब्द पहिचान॥

इसमें सम्प्रदायपने की गंध तक नही है। फिर राधा स्वामी पंथ वाले अपने को अलग मानें तो यही कहा जायेगा कि अभी उनको इस नाम तक

की समझ नहीं है। यह एक खास टैकनीकल शब्द है। जैसे गाय का शब्द है। उसके सींग, पूंछ, टाँग हैं। वह दूध देती है। इसी प्रकार राधास्वामी शब्द है जो यही सिद्ध करता है कि वह आदि सुरत और आदि शब्द है।

संसार में कबीर, नानक, राधास्वामी दयाल क्यों प्रकट हुए ? संसार के अज्ञान ने उनको पैदा किया। वे बीज बो गए। वह अँखुआ कभी फैलेगा, फूलेगा और फलेगा।

इस राधास्वामी शब्द को वर्णात्मक नाम के आधीन नहीं ला सकते हां, भाव के आधीन ला सकते हैं।

यहां (हनमकुण्डा) के लोगों ने राधास्वामी सत्संग की कमैटी बनाई है। याद रक्खो कि पक्षपाती न होना। अपने को अलग सम्प्रदाय न समझना। इसका प्रत्येक कार्यकर्ता सचाई और हित से काम करे।

शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

## पांचवाँ सत्संग

[ हनमकुण्डा ता0 ११-२-६२ प्रातः ]

मैं यह सोचा करता था कि यदि सच्ची बात कह जाऊँगा तो दूसरों का भला होगा मगर अनुभव बताता है कि इसमें असफल रहा। क्यों ? क्योंकि जो कुछ मैं कहना चाहता हूँ उसकी आवश्यकता नहीं। यह मेरा अपना ही भाव था या खब्त था।

अपने उरझे उरझियाँ, उरझा सब संसार।
अपने सुरझे सुरझियाँ, यह गुरु ज्ञान विचार ॥

मैं समझता था कि जिस तरह मुझे उस परमतत्व या मालिक की खोज रही है ऐसी ही खोज दुनियाँ को होगी मगर यह विचार गलत निकला। क्यों ? इसका समर्थन कबीर साहब के शब्द से होता है। वह यह है---

या जग अँधा में केहि समझावों ॥ टेक ॥
इक दुइ होय उन्हें समझावों, सब ही भुलाना पेट के धंधा।

पानी के घोड़ा पवन असवरवा, ढरकि परैं जस ओस के बुन्दा ॥ मैं ॥
गहरी नदियां अगम वहै धरवा, खेवनहारा पड़िगा फन्दा ।
घर की वस्तु निकिट नहिं आवत. दिखना बारि के दूढत अँधा ॥ मैं ॥
लागी आगि सकल बन जरिगा , बिन गुरु ज्ञान भटकिगा बन्दा !
कहै कबीर सुनो भाई साधो, इक दिन जाय लंगोटी झार बन्दा ॥ मैं ॥

सबसे बड़ी चीज जो मनुष्य को खींचती है वह पेट है । मन्दिरों में चढ़ावा न चढ़े तो मन्दिरों का बना रहना कठिन । यदि गुरुओ को भेट न मिलती, मत्थे टेकना न होता, मान प्रतिष्ठा न होती तो कोई गुरु न बनता ।

महात्मा लोग दूसरों को शिक्षा देते हैं कि यह संसार नाशवान है मगर आप मठ बनाकर बैठते हैं । उनके मन्दिर, मठ, मकान, आश्रम बन जाते हैं । फिर उनके ऊपर मुकदमे बाजी चलती है ।

मैं सत्संग क्यों कराता हूं ? यहाँ क्यों आया हूँ ? यह सत्संग कराने का बीझ क्यों सिर पर लिया हुआ है ? सत्संग में शक्ति खर्च होती है । फिर क्या गरज ? मेरे दिल में औरों की जैसी गरज नही थी । उस मालिक सर्व शक्तिमान की सब पूजा करते हैं । शास्त्र जिसके लिए बने, धर्म जिसके नाम पर बने, उस मालिक से मिलने का इच्छुक था ।

जानिबे हस्ती तलाशे यार में आये ।

विचारों में विभिन्नता थी । हिन्दुओं ने कोई विचारधारा प्रकट की । मुसलमानों ने कुछ कहा । दूसरे धर्म वालों ने तीसरी बात कहीं । मैं जानना चाहता था कि असलियत क्या है । उस समय यह प्रण किया था कि जो अनुभव होगा वह बताजाऊँगा ।

अब इस छान बीन और अभ्यास और साधन के बाद जो अनुभव हुआ वह कहता हूं और कहता रहता हूँ । इसके सिवाय मेरी और कोई गरज नहीं है ।

जिसको गुरुआई मिलती है वह महापापी है । पाप कहते हैं दुख को जो दुख मैं प्रतीत करता हूँ वह मैं हीं जानता हूँ ।

## अहेरी इन्टरनेशनल मानवता सोसाइटी को मानवदयाल जी महाराज का अपने जन्म दिन पर

# सन्देश

गुरुब्रह्मा गुरुविष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ॥

राधास्वामी !

मेरे प्यारे सत्संगी भाइयों और बहिनो ! मुझे श्री कमलेश्वर राव जी ने अहेरी International Manavta Society के नाम संदेश भेजने के लिया कहा है । इस मौके पर जब कि आप मेरे शारीरिक जन्म के दिन इक्टे हुए है, पहले मैं यह कहना चाहता हूँ कि उस तत्व का न तो जन्म होता है न मृत्यु होतीं है जो इस शरीर में अवतरित होता हैं । हाँ । जन्म मनुष्य के रूपमें इसलिये होता हैं कि जो सुरत अपने निजधाम से निकल कर युगों से भटक रही है वह सीधे और सच्चे रास्ते पर चलकर अपने लक्ष्य पर पहुँच जाये । इसलिये देवताओं को भी निज घर पहुंचने के लिए मानव के चोले में जन्म लेनापड़ता है । इस दृष्टि से सुरत का मनुष्य के रुप में आना आवश्यक है और इस दृष्टि से जन्मदिन हमें यह याद दिलाता है कि हम जिस उद्देश्य के लिए यहाँ पर आए हैं उसी को पूरा करने के लिए ही तन, मन, धन, लगा दें । परम दयाल जी महाराज ने 95 वर्ष की आयु तक दाता दयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन करते हुए अपना सारा जीवन मंजिल- ए –मकसूद ( अन्तिम लक्ष्य ) तक पहुँचने के लिए लगा दिया । उन्होने एक सच्चे फकीर के रुप में यह सिद्ध कर दिया कि असली मानवता इसी में है कि मनुष्य अपने स्वार्थ को त्याग कर सच्चे दिल से मनुष्य को केवल मनुष्य न मानकर वल्कि परम तत्व का साक्षात स्वरुप मानकर उसी की सेवा करे, उससे प्रेम करे और उसी को पहचाने । इसी पहचान को ही आत्म ज्ञान कहा जाता है । परमदयाल जी महाराज ने अपने मनुष्य बनो के

सन्देश में दातादयाल के इस विचार को बड़े सुन्दर तरीके से बयान किया है:—

पहचान ले अपने आप को, तो इन्सान खुदा है ।
जाहिर में गो है खाक; मगर खाक नहीं है ।।
जलवों की खता क्या; जो दिखाई नहीं देते ।
खुद देखने वाली की नजर पाक नहीं है ।।

मैं आपकी International Manavta Society को मानवता की इसी सच्चाई का संदेश देना चाहता हूँ । अपने आप को पहचानने का मतलब अपने उस आधार को जानना है जो कायम और दायम है । यह आधार ही मनुष्य का असली आन्तरिक रूप है । इसी को ही सन्तों ने सुरत कहा है । यह आपा न तो शरीर है, न मन हैं और न ही वह आत्मा हैं जिसे कारण शरीर या प्रकाश कहाजाता है । वह इन तीनो में, इन तीनों से न्यारा है । उसी के आधार पर ही शरीर, मन और आत्मा की धारे जीवन को बनाये रखती हैं । इस का मतलब यह नहीं है कि शरीर, मन और आत्मा हैं जी नहीं । ऐसा कहना बाचक ज्ञानी बनना होगा । मानवता इसी में है कि इन तीनों की सच्चाई को जान कर उस परम तत्व यानि आपे में ठहर जाना है ताकि शरीर, मन और आत्मा का एक दूसरे से तालमेल हो जाये । यही तालमेल सत, चित और आनन्द की अनुभूति कहा जाता हैं । सत का मतलब शरीर की ताकत को बनाये रखना और इस तरह से स्वस्थ रहना कि इन्सान खुश मुजिस्सिम हो जाये । इसी तरह से चित के अनुभव का मतलब, मन के स्वरुप को समझ कर विचार शक्ति से शरीर को स्वस्थ रखना और मानसिक खुशी का अनुभव करना । इसी तरह से आनन्द का अनुभव आन्तरिक प्रकाश के द्वारा आत्मा के आनन्द को पाना है । इन तीनों अवस्थाओं के बाद में ही अपने आप को जानकर, पहचानकर उसमें ठहर जाना चौथा पद है । जब उस बात का पूरा यकीन हो जाता है कि चाहे शरीर का नाश हो जाये, चाहे मन बिखर जाये, चाहे आत्मा भी प्रकाशमय आनन्द से अलग हो जाये,

दायम रहेगा। उस हालत में मनुष्य अपनी पहचान आप कर लेता है और तभी वह अपने आप को खुदा से जुदा नहीं समझता।

दाता दयाल जी महाराज ने इसी हालत को बयान करते हुए कहा है:—

फिकर-ए-बातिल छोड़कर असलियत का ध्यान हो।
अपने आपे का जानना और अपने आपे का ज्ञान हो।'

फिकर-ए-बातिल का मतलब शरीर मन और आत्मा में अपने आप को न फंसा देना है जैसा कि मैंने अभी २ कहा है। इसका मतलब यह नहीं है कि हम सत चित और आनन्द को झूठा समझें। इसका मतलब सिर्फ इतना है कि हम इनके असली रूप को समझ कर अपना जीवन बनायें। अपने आप को जानने का मतलब परम तत्व में ठहर जाना। जब मनुष्य अपने आप को ठहर जाता है तो शरीर, मन और आत्मा जो उस आपे की धाराएँ हैं एक सार हो जाती है यानि इनमें समता आ जाती है और जीवन स्वस्थ और सुख के आनन्द को भोगता हुआ आन्तरिक शान्ति का अनुभव करता है। यही International Manavta Soceity का लक्ष्य है औरहोना चाहिए

मैं सच्चे दिल से चाहता हूँ कि आप परम दयाल जी के सत्सग को सुनकर और मानवता के असली रुप को समझ कर अपनी इस Society के द्वारा इस सच्चाई का अनुभव करते हुए मानव मात्र तक इस शुभ सन्देश को फैलायें। इसी में सभी का कल्याण है और इसी उददेश्य के लिए ही मालिक ने आपको यह प्रेरणा दी है कि आप International Manavta Society को स्थापित करें और इसी के असूलों को तमाम जनता तक पहुँचाये इन शब्दों के साथ में आपको फिर शुभकामना देता हूं और सच्चे दिल से चाहता हूँ कि आपकी Society अपने उददेश्य में सफल रहे!

आपका फकीरमय,

अन्दर की राधा स्वामी!

—

## शब्द

अँखिया बिन दरशन तरस रहीं ॥टेक॥
सूखे होंट आँख पथराई, हल कलेजे पैठा।
थर थर काँपे निबल अंग मेरा, मन बैरी बन बैठा ॥ तरस
दिन को चैन रात नहीं निद्रा, व्याकुल चित भरमाऊँ।
जगत अँधेरा सूझे नहीं कुछ, कहाँ आऊँ कहाँ जाऊँ ॥ तरस
दाना पानी न मोहि सुहावे, किसी की बात न भावे।
रोग सोग की समझ कठिन, पता वैद्य नहीं पावे ॥ तरस
बिरह की आग हिये में भड़की, सुलग रही दिन राती।
धुवाँ न उठे न ज्वाला फूटे, किसे दिखावन जाती ॥ तरस
मनकी उपजी मन में रहानी, मन कुरेद की खानी।
मन ही समझे मन की कहानी, और कोई क्या जानी ॥ तरस
घट में उठी चाह प्रीतम की, घट में दर्शन माँगू।
घट की आँख से रूप निहारूँ, घट चरनन से लागूँ ॥ तरस
घट में आओ दरस दिखाओ, घट का मन्दिर सूना।
घट को बसाओ जोति जलाओ, हो प्रकाश दिन दूना ॥ तरस
प्रीतम शब्द सुरत चित का अंग, प्रेम बंक की नाली।
सुरत शब्द का मेल मिले जब, सुख से रहूँ निहाली ॥ तरस
देकर दरस पीर मेरी मेटो, हरो त्रिगुन दुख साला।
दया करो मैं दयापात्र हूँ, राधास्वामी दयाला ॥ तरस

# "मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

| | | |
|---|---|---|
| १—प्रकाशन का स्थान | : | अलीगढ़ |
| २—प्रकाशन अवधि | : | मासिक |
| ३—मुद्रक का नाम | : | श्रीमती सुधा मीतल |
| क—राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| ख—पता | : | शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ । उत्तर प्रदेश |
| ४—प्रकाशक का नाम | : | श्रीमती सुधा मीतल |
| राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| पता | : | शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़ |
| ५—सम्पादक का नाम | | श्रीमती सुधा मीतल |
| राष्ट्रीयता | | भारतीय |
| पता | : | शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ |
| ६—स्वत्वाधिकारी | : | श्रीमती सुधा मीतल |
| संरक्षक | : | परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज |

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ अक्टूबर, १९७८

सुधा मीतल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. No. L-ALG -- 28


# पुस्तकें

हमारे यहां

**महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज**

**कृत**

हिन्दी को आध्यात्मिक, धार्मिक, स्त्री उपयोगी, स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती' सिलसिले के उपन्यास तथा परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है।

पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—

कार्यालय

**मनुष्य बनो**

शिव भवन, लेखराजनगर,

अलीगढ़ (उ० प्र०)


ग्राहक सं० ———

अ० स० सम्पादक — महेशचन्द्र मीतल

सम्पादक

व्यवस्थापक व प्रकाशक—

श्रीमती सुधा मीतल,

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़।

Printed by S. Mittal, Data Dayal Printers, Aligarh

# गरुड़ पुराण रहस्य

## प्रथम भाग

### माता भागवती देवी के जीवन की झाँकी

माता भागवती देवी परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज की धर्मपत्नी थीं। उनके जीवन वृतान्त देने के कई कारण हैं। सबसे मुख्य तो यह है कि उनकी मृत्यु पर परिवार के लोगों के कहने पर गरुड़ पुराण की कथा रखाई गई और जिसे महाराज जी ने भी सुना। उसके सुनने पर उसके गुप्त रहस्यों को महाराज जी ने विज्ञान तथा निजी अनुभव के आधार पर वर्णन किया है। दूसरा कारण यह है कि जो लोग इस पुस्तक को पढ़ेंगे और इसमें माता जी का उल्लेख आयेगा तो उनके हृदय में उनके बारे में जानने की लालसा पैदा होगी। तीसरी बात यह है कि ऐसे पुरुष की पत्नी के बारे में जानने की उत्कंठा हर एक को रहती है इसलिये उनका वृत्तान्त दिया जाता है। उनके जीवन का संक्षिप्त विवरण मेरी प्रार्थना पर महाराज जी ने स्वयं लिखकर भेजा है जो आगे दिया जाता है किन्तु मैंने भी १०-१२ वर्ष के समय में जो उनके बारे में जाना उसको बिना लिखे रह नहीं सकता।

जब मैं पहिली बार होशियारपुर गया था तो महाराज जी के पास घर पर ही ठहरा था। उस समय जिस प्रेम भाव से मेरी मां व्यवहार करती थी, उसी ढंग से चौके में पास बिठा कर खाना खिलाया और पुत्रवत व्यवहार किया।

है या सुखी करता है।

## ( यमराज व धर्मराज का मार्ग -उससे बचाव )

प्रश्न—यह ठीक है मगर यह स्वप्न है। क्या मरने के बाद भी यही दशा होती है ?

उत्तर—हाँ ! मृत्यु भी एक लम्बा स्वप्न है। जिस प्रकार इस स्वप्न के पश्चात जाग्रत अवस्था आती है। इसी प्रकार इस मृत्यु के लम्बे स्वप्न के बाद भी जाग्रति आती है; क्यों कि प्रत्येक स्वप्न का परिणाम जाग्रति होना अनिवार्य है। इस हमारे स्वप्न में या हमको कोई दूसरा आदमी आवाज देकर या शरीर को हिलाकर जगा देता है अथवा हम स्वयं जागते हैं मगर मृत्यु के बाद जो हम अपने मानसिक स्वप्न या सँकल्प विकल्पों से जाग्रत होते हैं तो चूंकि यह शरीर नहीं होता है इसलिये या तो हम किसी दूसरे देह में जायेंगे या उस स्वप्न से या मानसिक कल्पनाओं से ऊपर जाकर किसी और जगह रहेंगे। इस स्वप्न के समय को यमराज या धर्म-राज का मार्ग कहते हैं।

जो आदमी अकाल मृत्यु से मरते हैं अर्थात जिनको मरने का ज्ञान नहीं होता है कि वह मर रहे हैं। वह अपनी मान-सिक दुनियाँ में अपने ही स्वप्न में रहते हैं, क्यों कि उनका शरीर नहीं होता है इसलिये उनका सूक्ष्म शरीर भटकता रहता है। ऐसे प्राणियों की सद्गति के लिये अर्थात उनको उस स्वप्न से या इस भटकने से बचाने के लिए यह अनिवार्य है कि कोई उनके सूक्ष्म शरीर के स्वप्न को तुड़वा दें और उनको यह विश्वास करादें कि यह स्वप्न जो तू देख रहा है यह वास्तव में तेरा अपना ही ख्याल है और तू इसे निकाल।

# * धन्यवाद *

( १ ) श्री तारा चन्द्र जी इटावा, ने ५१/- रु० अपनी पुत्री सौ० मनोरमा के शुभ विवाह के शुभ अवसर पर भेजे हैं ।

( २ ) श्री जगदीश चन्द्र पुत्र श्री पूनम चन्द्र जी इटावा, ने ५१/- रु० 'मनुष्य बनो' की सहायतार्थ भेजे हैं ।

( ३ ) १०१/- रु० श्री नन्द किशोर जी पुत्र श्री तारा चन्द्र जी इटावा, ने 'मनुष्य बनो' की सहायतार्थ भेजे हैं ।

( ४ ) ५०/- रु० श्रीमती कान्ता शर्मा ने 'मनुष्य बनो' की सहायतार्थ भेजे हैं ।

हम सभी भाई-बहनों के हृदय से आभारी हैं जिन्होंने हमें मनुष्य बनो पत्रिका को निकालने हेतु सहायता देकर सम्बल दिया है । मालिक से उनकी मनोकामनाओं को पूर्ण करने की प्रार्थना करते हैं ।

सम्पादक